पंजीयन संख्या : 68939/98 अंक - 06, वर्ष 24

ज्ञान तत्व

समाज शास्त्र | अर्थ शास्त्र | धर्म शास्त्र | राजनीति शास्त्र

444

-: सम्पादक :-

बजरंग लाल अग्रवाल

रामानुजगंज (छ.ग.)

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

पोस्ट की तारीख 01.04.2024

प्रकाशन की तारीख 15.03.2024

पाक्षिक मूल्य - 2.50/- (दो रूपये पचाय पैसे)

"शराफत छोड़ो, समझदार बनो"

"सुनो सबकी, करो मन की"

"समस्याओं के प्रणेता, कर कानून नेता"
"समाधान का आधार ज्ञान यज्ञ परिवार"

"चाहे कोई अत्याचार, नहीं करेंगे नही सहेंगे"
"हमें सुराज्य नही, स्वराज्य चाहिए"

(2)

विविध विषयों पर मुनि जी के लेख–

कांग्रेस और नेहरु परिवार का भविष्य–

हम इस बात की चर्चा करते हैं की नेहरू परिवार का भविष्य क्या है और वर्तमान परिस्थितियों में उसके सामने क्या–क्या विकल्प है। पहली बात तो यह है कि भारतीय राजनीति में सिर्फ दो ही दल ऐसे हैं जिन्हें दल कहा जा सकता है साम्यवादी पार्टी तो पूरी तरह एक राजनीतिक दल के समान है भारतीय जनता पार्टी भी नरेंद्र मोदी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को मिलाकर चल रही है इसलिए उसे भी आंशिक रूप से राजनीतिक दल कहा जा सकता है अन्य सभी राजनीतिक दल तो कुछ व्यक्तियों की दुकान भर है जिसमें कांग्रेस पार्टी भी शामिल है। नेहरू परिवार का भविष्य कांग्रेस के साथ जुड़ा है और कांग्रेस का भविष्य भी नेहरू परिवार के साथ जुड़ा है। वर्तमान भारत में नेहरू परिवार का भविष्य लगातार समाप्त होता दिख रहा है क्योंकि नेहरू परिवार ने पूरी तरह हिंदुओं का विश्वास खो दिया है असम के मुख्यमंत्री ने तो यहां तक संभावना व्यक्त की है कि अब कांग्रेस में सिर्फ मुसलमान ही रहेंगे बाकी सब लोग कांग्रेस से धीरे–धीरे निकल जाएंगे यह एक बहुत गंभीर समस्या है। इससे बचने के लिए यदि नेहरू परिवार के लिए विकल्पों की तलाश करें, तो नेहरू परिवार को सबसे पहले साम्यवाद से दूर हो जाना चाहिए। अब उसे मध्य मार्ग अपनाना चाहिए, चीन और रूस के पिछलगू में गिनती नहीं रहनी चाहिए, भारत में भी साम्यवादियों के साथ नेहरू परिवार का जुड़ाव समाप्त हो जाना चाहिए। दूसरी बात यह है कि नेहरू परिवार को पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष हो जाना चाहिए उसके साथ अभी जो मुस्लिम साम्प्रदायिकता जुड़ी हुई है वह नेहरू परिवार के लिए बहुत घातक है जब तक नेहरू परिवार मुसलमान पर निर्भरता को नहीं छोड़ देगा तब तक नेहरू परिवार राजनीति में बच नहीं सकेगा। यदि यह दो काम नेहरू परिवार नहीं कर सकता तो उसे एक तीसरे विकल्प की दिशा में बढ़ाना चाहिए उसे पूरी तरह तेज गति से गांधी मार्ग पर चल पड़ना चाहिए लोक स्वराज ग्राम स्वराज परिवार स्वराज की दिशा ही गांधी मार्ग है। यदि नेहरू परिवार इस दिशा में बहुत तेज गति से आगे बढ़ता है तब ही नेहरू परिवार स्वयं और कांग्रेस को बचा सकता है अन्यथा नेहरू परिवार के पास दो ही मार्ग है की या तो वह राजनीति से दूर हट जाए और कांग्रेस को नया मार्ग चुनने दे अन्यथा स्वयं तो डूबेगी ही कांग्रेस को भी डूबा देगी। अगले 5 वर्ष नेहरू परिवार के लिए निर्णायक होने वाले हैं। यदि वर्तमान चुनाव के पहले नेहरू परिवार ने कोई निर्णय नहीं किया तो भारत को नेहरू परिवार और कांग्रेस से सदा–सदा के लिए मुक्ति मिल सकती है।

श्रमजीवियों के शोषण की नीति बुद्धिजीवी ही बनाते हैं–

एक मेरे बड़े अच्छे मित्र और गंभीर विचारक नरेंद्र सिंह जी ने एक पोस्ट लिखी है इसका आशय यह है की व्यक्ति का श्रम तो व्यक्ति की जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति तक ही क्षमता रखता है उसकी पूंजीगत क्षमता तो बुद्धि ही रखती है। इसका अर्थ यह हुआ की बुद्धि के द्वारा ही धन संचय संभव है श्रम के माध्यम से नहीं। ऐसी परिस्थितियों में बुद्धिजीवी श्रमजीवियों पर हावी हो सकते हैं जैसा की दुनिया में होता रहा है। हमारी व्यवस्था का यह दायित्व है कि वहश्रम को बुद्धिजीवियों के शोषण से बचावे।

मैं नरेंद्र सिंह जी के इस पूरे विचार से पूरी तरह सहमत हूं। वर्तमान समय में बुद्धिजीवियों द्वारा लगातार श्रम शोषण के नए–नए तरीके खोजे जा रहे हैं चाहे वह तरीका धार्मिक हो राजनीतिक हो या आर्थिक हो किसी भी प्रकार का हो लेकिन उसके मूल में श्रम शोषण की इच्छा छिपी हुई है। हमारा यह कर्तव्य है कि हम इस दिशा में गंभीरता से चिंतन करें। यह चिंता करना हमारा सिर्फ कर्तव्य ही नहीं है बल्कि दायित्व है।

चुनावी घोषणापत्रों की समीक्षा –

वर्तमान समय में आम चुनाव सिर पर हैं विपक्ष या सत्ता दल के बीच जनता परीक्षा कर रही है। सत्ता दल भविष्य की योजनाएं प्रस्तुत कर रहा है। देश में समान नागरिक संहिता लाई जाएगी, विदेशी मुसलमान को भारत में प्रवेश से वंचित किया जाएगा, भौतिक विकास की गति तेज की जाएगी तथा हम विकास के मामले में दुनिया से कम्पटीशन करेंगे, भीख नहीं मांगेंगे, हिंदुओं को दुनिया में सम्मानपूर्वक समानता के आधार पर जीने का अधिकार होगा, उन्हें दूसरे दर्जे का नागरिक बनकर नहीं रहना होगा।

दूसरी ओर विपक्षी दल खासकर नेहरू परिवार बार–बार इस बात की घोषणा कर रहा है कि–हम हिंदू मुसलमान के बीच में प्रेम पैदा करेंगे, हम जातिवाद को स्वीकार करेंगे और देश में आरक्षण को बढ़ाएंगे जातीय जनगणना कराएंगे, हम सरकारी नौकरों की संख्या और बढ़ाएंगे, हम भारत में अधिक से अधिक नौकरी देंगे। विपक्ष लगातार यह भी घोषणा कर रहा है कि हम कश्मीर में फिर से 370 लागू करेंगे, हम सेना में भरती के लिए जो नए नियम बनाए गए हैं, उन नियमों को भी समाप्त करेंगे, हम किसानों को एमएसपी देंगे। इस प्रकार सत्ता पक्ष और विपक्ष ने अपने–अपने चुनावी वादे जनता के बीच में रखे हैं।

मेरे विचार से स्वतंत्रता के समय भारत की सबसे बड़ी समस्या थी भारत का विभाजन आज भी वह खतरा हमारे सिर पर कायम है। दूसरा खतरा था की रोजगार के अवसर को बाधित करके अधिक से अधिक नौकरी देने की का प्रयत्न हो रहा था। हिंदुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा जा रहा था। मैं समझता हूं कि विपक्ष की योजना में ऐसा कुछ भी नहीं है जिस आधार पर हम विपक्षी दलों को वोट दे सकें, वही हिंदुओं में विभाजन, वही सरकारी नौकरी के प्रति आकर्षण, वही धारा 370। बताइए किस आधार पर विपक्ष को वोट दिया जाए।

कट्टरता और कट्टरवाद को अलग अलग पहचानने की जरुरत–

कल रात रामानुजगंज कार्यालय से 8:00 बजे इस विषय पर विचार मंथन हुआ की धार्मिक कट्टरता क्या है और कट्टरवाद क्या है। कट्टरता और कट्टरवाद दोनों मिले–जुले शब्द दिखते हैं किंतु मेरे विचार से दोनों में बहुत फर्क है। कट्टर वह व्यक्ति होता है, जो व्यक्ति अपनी मान्यताओं में कट्टर होता है तथा वह बिना सोचे समझे किसी दूसरे की किसी बात से तत्काल प्रभावित नहीं होता उसे कट्टर कहते हैं। गांधी पूरी तरह कट्टर थे हिंदुत्व के मामले में भी गांधी जी बहुत कट्टर थे। एक बार गांधी और सावरकर की भेंट हुई सावरकर ने गांधी जी को मांसाहार के पक्ष में बहुत सी बातें कहीं और मांसाहार करने का दबाव डाला गांधीजी एक कट्टर हिंदू थे वैचारिक रूप से भी और भावनात्मक रूप से भी। गांधी अपनी बात पर दृढ़ रहे यह थी गांधी की कट्टरता और यह थी सावरकर का कट्टरवाद।

कट्टरवादी दूसरों को अपनी बात मनवाने की जिद करता है और जो कट्टर होता है वह अपनी बात पर ध्यान रहता है। दूसरे को अपनी बात मनवाने की जिद नहीं करता। यही कट्टरता और कट्टरवाद में फर्क है। इस्लाम में कट्टरवाद बहुत अधिक है कट्टरता उतनी नहीं है। जिन्ना में धार्मिक कट्टरता नहीं थी जिन्ना नमाज भी नहीं पड़ता था वेशभूषा भी अलग तरह की थी खान–पान भी अलग तरह का था लेकिन दूसरों को अपनी बात मानने के लिए दबाव डालता था इसलिए जिन्ना को कट्टरवादी माना जाता है और गांधी को कट्टर।मैं अपने को कट्टर हिंदुत्व वाला मानता हूं। मैं भी बिना सोचे किसी के दबाव में उसकी बात को स्वीकार नहीं करता लेकिन मैं किसी दूसरे को अपनी बात मानने का दबाव भी नहीं डालता स्पष्ट है कि मैं कट्टर हूं कट्टरवादी नहीं।

नाबालिक बुद्धि के राहुल गाँधी हैं समाजविरोधी–

नाबालिक बुद्धि के राहुल गांधी ने कल खुलेआम घोषणा की है की जल जंगल जमीन पर आदिवासियों का अधिकार होना चाहिए वनवासियों का नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि भारतीय जनता पार्टी और संघ परिवार आदिवासियों को वनवासी कह कर उनके साथ छल कर रही है। राहुल गांधी ने यह भी घोषणा की है कि यदि हम सत्ता में आएंगे तो मुसलमान को विशेष सुरक्षा देने के लिए रंगनाथन आयोग की रिपोर्ट भी लागू की जाएगी। राहुल गांधी ने यह भी घोषणा की है कि जातिगत जनगणना कराकर आरक्षण की सीमा भी बढ़ाई जाएगी। आप सब मित्र जानते हैं कि मैं जन्मना जाति का घोर विरोधी हूं और जो भी व्यक्ति जन्म के अनुसार जाति का पक्ष लेता है मैं उसे विरोधी मानता हूँ। राहुल गांधी ने यह तीनों बातें लिखकर मुझे बहुत कष्ट पहुंचाया है। सच बात यह है की जन्मना जाति का खुलकर विरोध किया जाना चाहिए जाति कर्म से होती है जन्म से नहीं। राजनीतिक स्वार्थ के लिए राहुल गांधी मुसलमानों का पक्ष ले रहे हैं, राहुल गांधी हिंदुओं के बीच विभाजन पैदा कर रहे हैं, राहुल गांधी जन्मना जाति की वकालत कर रहे हैं, इस प्रकार राहुल की जो नीतियां हैं वे नीतियां पूरी तरह समाज के विरुद्ध कार्य माना जाना चाहिए। राहुल का समर्थन करने वालों का सामाजिक बहिष्कार किया जाना चाहिए क्योंकि जनगणना जाति का समर्थन किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है।

मेरे एक मित्र ने विचार व्यक्त किया है की विभिन्न आयोगों की जांच से यह प्रमाणित हो चुका है कि मुसलमानों की आर्थिक स्थिति हिंदुओं की तुलना में ज्यादा खराब है। इसलिए राहुल गांधी मुसलमानों की चिंता कर रहे हैं। मेरे विचार से यह आधा अधूरा सत्य है। मुसलमानों का लक्ष्य है कि आधी रोटी खाएंगे लेकिन अपनी जनसंख्या बढ़ाएंगे। यह बताइए कि मुसलमान कहां सफल नहीं है? मुसलमान आधी रोटी खा रहा है, भूखा रह रहा है लेकिन अपनी जनसंख्या बढ़ा रहा है, तो क्या हिंदू अपनी रोटी में से उस मुसलमान को इसलिए रोटी दे दें कि मुसलमान अपनी जनसंख्या बढ़ाता रहे। आज ही एक सर्वे प्रकाशित हुआ है की उत्तर प्रदेश के सीमावर्ती 7 जिलों में पिछले कुछ वर्षों में कई 100 मदरसे खोले गए जिसके लिए वहां के मुसलमानों ने धन इकट्ठा किया मुसलमान आधी रोटी खा रहा है और मदरसे खोल रहा है और हिंदू भरपेट रोटी खा रहा है बच्चों को सरकारी स्कूल में पढ़ा रहा है।मेरे विचार से इस समस्या का समाधान सबसे पहले मुसलमानों को सोचना होगा की 'पूरी रोटी खाएंगे संख्या नहीं बढ़ाएंगे'। हिंदू इस संबंध में पूरी तरह सावधान है। इसलिए मैं राहुल गांधी को नासमझ कह रहा हूं। राहुल गांधी पूरी तरह वोटों के लालच में साम्प्रदायिक हो गए हैं और एक तरह से अप्रत्यक्ष रूप से मुसलमानों के ही वकील बन गए हैं। मैं लगातार भारत में सर्वे करअनुभव कर रहा हूं कि असम के

मुख्यमंत्री की इस बात में सच्चाई दिखती है कि अब कांग्रेस में मुसलमानों को छोड़कर शायद ही कोई बचा हो।

मैंने राहुल गांधी को नाबालिक और नासमझ लिखा और इस बात पर अब भी कायम हूं राहुल गांधी वास्तव में नाबालिक और नासमझ ही है। कुछ वर्ष पहले ही मनमोहन सिंह सरकार में राहुल गांधी ने यह बयान दिलवाया था की भारत की संपदा पर अल्पसंख्यकों का पहला अधिकार है अभी दो दिन पहले राहुल गांधी ने यह बयान दिया की जल जंगल जमीन पर आदिवासियों का पहला अधिकार है, आदिवासी यहां के मूल निवासी हैं। मैं आज तक नहीं समझा की जल जंगल जमीन पर गांव का अधिकार माना जाना चाहिए या किसी जाति (व्यक्ति समूह)विशेष का। यदि जल जंगल जमीन पर आदिवासियों का अधिकार बांध दिया गया तो यदि कोई आदिवासी दिल्ली में रहता होगा तो उसका भी जल जंगल जमीन पर इसी तरह का अधिकार होगा, जैसा गांव के आदिवासी का। सर्वोदय के लोगों ने मुझे बताया था कि जल जंगल जमीन का निर्णय गांव को करना चाहिए, इसका स्वामित्व गांव का होना चाहिए। मैं इस बात से भी सहमत नहीं हूं लेकिन फिर भी प्राथमिक तौर पर यह बात समझी जा सकती है लेकिन जल जंगल जमीन पर आदिवासियों के एकाधिकार का यह बयान तो पूरी तरह मूर्खतापूर्ण है। मेरे विचार से राहुल गांधी को अपने बयान को और साफ करना चाहिए कि क्या जल जंगल जमीन पर किसी एक जाति विशेष का ही अधिकार होगा। मेरे विचार से भारत की संपूर्ण संपदा पर भारतवासियों का विशेष अधिकार होना चाहिए जिसमें जल जंगल जमीन सब कुछ शामिल है। मेरा आप मित्रों से निवेदन है की जन्मना जाति का समर्थन करके अपने राजनीतिक रोटी सेंकने वाले राजनीतिज्ञों का हम खुलकर बहिष्कार करें।

यह हिंदू मुसलमान और राहुल गांधी की चर्चा का अंतिम हिस्सा है। हम इस बात पर विचार करें की वर्तमान समय में हिंदू और मुसलमान के बीच किस प्रकार के संबंध होने चाहिए। यह स्पष्ट है की स्वतंत्रता के बाद नेहरू परिवार और मुसलमानों ने मिलकर हिंदुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाया जिससे उनका मनोबल बढ़ा। अभी भी उनका मनोबल बराबरी के आधार पर नहीं आया है, यद्यपि पहले की तुलना में उनका बढ़ा हुआ मनोबल कुछ घटा जरूर है किंतु अभी भी उन्हें यह उम्मीद है कि शायद फिर से नेहरू परिवार सत्ता में आ जाए। इन परिस्थितियों में हमारा यह कर्तव्य है कि हम पूरी तरह उनका मनोबल घटाने का प्रयास करें। इस कार्य के लिए हमें मोदी सरकार की पूरी मदद करने की जरूरत है। मुसलमानों का बढ़ा हुआ मनोबल कम करने के लिए यदि साम्प्रदायिक हिंदुओं की मदद भी लेनी पड़े तो अल्पकाल के लिए ली जा सकती है लेकिन मुस्लिम साम्प्रदायिकता को कमजोर किए बिना हम सुरक्षित और शान्ति

से नहीं रह पाएंगे। हम दुनिया को बेहतर नया संदेश नहीं दे पाएंगे। इसलिए हमारी सबसे पहली आवश्यकता भारत में यही है कि हम मुसलमानों के बढ़े हुए मनोबल को बराबरी के स्तर तक ले आएं। जब मुसलमान बराबरी से नीचे जाएंगे और साम्प्रदायिक हिंदू उछल–कूद शुरू करेंगे तब इन मुसलमानों को साथ लेकर हिंदुओं का मनोबल तोड़ने की पहल हमें ही करनी होगी। यही रणनीति है कि शत्रु का शत्रु मित्र होता है। वर्तमान समय में मुस्लिम साम्प्रदायिकता के शत्रु के रूप में हिंदू साम्प्रदायिकता खड़ी है और इसका समर्थन लेना कोई गलत नहीं है मैं इस रणनीति का समर्थक हूं। स्पष्ट कर दूं कि मैं हिंदू हूं, मैं गांधी के हिंदुत्व को प्राथमिक स्तर पर मानता हूं, मैं नेहरू और सावरकर के नीतियों का विरोधी हूं, हम लोग जिस संस्था के माध्यम से काम कर रहे हैं उसका नाम 'ज्ञानयज्ञ परिवार' है और उसका ध्येय वाक्य है ''वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व की प्रयोगशाला''। मैं आपको वचन देता हूं की हम लोग सरकार के साथ मिलकर जल्दी ही भारत से साम्प्रदायिकता का समूल विनाश करने में सफल हो जाएंगे।

<u>मुसलमानों के गलत होने पर भी इंडी गठबन्धन के लोग उकसाते है–</u>

2 दिन पहले शुक्रवार को दिल्ली में नमाज पढ़ने वालों ने सड़क जाम कर दी थी कई बार समझाने और चेतावनी के बाद भी वे सड़क खाली करने को तैयार नहीं हुए तो एक पुलिस वाले ने बहुत हिम्मत करके उन्हें धक्का दे दिया लात मार दी। इस घटना परINDI गठबंधन के लोगों ने प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया और मुसलमानों को उकसाया। मुसलमान वहां नारेबाजी करने लगे चोरी और सीनाजोरी का इससे अधिक अच्छा और कोई उदाहरण नहीं हो सकता। पुलिस वाला किसी भी रूप में गलत नहीं था गलत थे वे लोग जो सड़क जाम करके आवागमन को अवरुद्ध कर रहे थे। वह स्थान नमाज पढ़ने के लिए नहीं था यदि कोई व्यक्ति किसी प्रतिबंधित जगह पर जूते पहन कर चला जाता है तो जूते पहन कर जाने वाला गलत है उसे हटाने वाला नहीं। सड़क आवागमन के लिए खुली हुई है आप अपने घर में नमाज पढ़ सकते हैं। आश्चर्यजनक यह है कि साम्प्रदायिक INDI गठबंधन के लोग मुसलमानों के पक्ष में खड़े हो जाते हैं। आज सारा भारत देख रहा है कि कांग्रेस पार्टी में भगदड़ मची हुई है क्योंकि कांग्रेस पार्टी राहुल गांधी की साम्प्रदायिकता से परेशान है। राहुल गांधी निरंतर अल्पसंख्यक तुष्टिकरण की तरफ बढ़ रहे हैं, राम मंदिर उद्घाटन का विरोध कर रहे हैं। कांग्रेस पार्टी के लोग धर्मनिरपेक्ष प्रवृत्ति के हैं वे राहुल गांधी की नीतियों के विरोध में है, लेकिन तानाशाह राहुल किसी को अपनी बात कहने की स्वतंत्रता नहीं दे रहे। सोनिया प्रियंका और राहुल मिलकर के सारी नीतियां बना रहे हैं इसलिए कांग्रेस पार्टी में भगदड़ मची हुई है। पहले तो प्रतिदिन एक नेता

कांग्रेस छोड़ता था अब तो भारी संख्या में भागने वालों की लाइन लगी हुई है। मेरे विचार से कांग्रेस छोड़ने की अपेक्षा सब मिलकर अगर राहुल गांधी से मुक्ति पा लें तो देश के लिए अधिक अच्छा होगा। देश को अल्पसंख्यक तुष्टीकरण नहीं समान नागरिकता चाहिए।

सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था की सबसे बड़ी बाधा टूटती परिवार व्यवस्था–

वैसे तो पूरी दुनिया में ही महिला पुरुष के संबंध कमजोर हो रहे हैं परिवार व्यवस्था टूट रही है लेकिन भारत में इसकी गति बहुत तेज है। भारत दुनिया का एक ऐसा देश है जहां परिवार व्यवस्था को मान्यता प्राप्त है लेकिन धीरे–धीरे व्यवस्थाएं टूट रही है। इस संबंध में एक सर्वेक्षण किया गया जिसमें परिवारों को दो भागों में बांटा गया एक भाग में ऐसे परिवार थे जिनमें महिलाएं आधुनिक उच्च शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से विकसित परिवार की थी दूसरे ग्रुप में वह महिलाएं थी जो पारंपरिक परिवारों की थी आर्थिक दृष्टि से मध्यम थी अल्पशिक्षित थी। कुल आबादी के हिसाब से भारत में 10% ही परिवार ऐसे हैं जो उच्च शिक्षित संपन्न और आधुनिक हैं शेष 90% तो पारंपरिक परिवारों के लोग हैं। सर्वे में यह बात सामने आई कि जिन परिवारों में तलाक अधिक है, आपस में विवाद है, मुकदमे चल रहे हैं, परिवार टूट रहे हैं उनकी संख्या 10% की तुलना में 60% है और परंपरागत परिवार 90% होते हुए भी उनमें इस प्रकार के विवाद 40% हैं यह एक गंभीर शोध है की विकसित उच्च शिक्षित और आधुनिक परिवारों की महिलाएं परिवार तोड़ने में 90% पारम्परिक परिवारों की तुलना में बहुत अधिक क्यों है? इस समस्या के कारण को खोजने की आवश्यकता है।

जिस परिवार में महिलाएं अधिक आधुनिक, उच्च शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से अधिक संपन्न है, उन परिवारों में टूटने का प्रतिशत बहुत अधिक है। इनमें से आज हम आधुनिकता पर विश्लेषण कर रहे हैं। एक सर्वमान्य सिद्धांत के अनुसार दुनिया दो भागों में बंटी हुई है, एक भाग मानता है कि जो कुछ पुराना है और पारंपरिक है वह पूरा का पूरा सही है और उसमें किसी भी प्रकार के बदलाव की जरूरत नहीं है। दूसरी ओर एक भाग यह मानता है कि जो पुराना और पारम्परिक है वह पूरी तरह बदल देने योग्य है। इस बदलाव को ही आधुनिक कहा जाता है। जबकि मेरे विचार में पारम्परिक मान्यताओं में सोच समझ कर बदलाव लाने की जरूरत है। किंतु बदलाव के लिए हर परंपरा से छेड़छाड़ करना उचित नहीं है। वर्तमान समय में जिन परिवारों में आधुनिकता, उच्च शिक्षा और सम्पन्नता एक साथ इकट्ठी हो जा रही है उन परिवारों में पुरानी सभी मान्यताओं को दकियानूशी और रूढ़िवादी कहने और मानने की एक नई परंपरा घर कर गई है। ऐसे परिवारों में संयुक्त परिवार और सामाजिक

वातावरण की जगह व्यक्तिगत स्वतंत्रता का भाव अधिक तेजी से बढ़ रहा है। वर्तमान समय में परिवारों के टूटने में यह आधुनिकतावाद और व्यक्तिगत स्वतंत्रता महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

वंशवाद,परिवारवाद और सुप्रीमोवाद

प्रेमकुमार मणि

वंशवाद, परिवारवाद और सुप्रीमोवाद समकालीन राजनीति के ऐसे बिंदु हैं,जिन पर प्रायः चर्चा होती रहती है. पिछले दिनों प्रधानमंत्री मोदी ने राजनीतिक क्षेत्र में उभरे परिवारवाद की आलोचना को अपने वक्तव्य का केंद्रीय मुद्दा बनाया,तब सब को पता था कि वह कहाँ चोट कर रहे हैं। उनका इशारा मुख्य तौर पर प्रतिपक्षी दलों–कांग्रेस, राष्ट्रीय जनता दल, समाजवादी पार्टी आदि की ओर ही था। हालांकि छोटे–छोटे अनेक दल इस परिभाषा के तहत आते हैं। जिनमें से कई तो भाजपा के नेतृत्व वाले एनडीए में शामिल हैं. पता नहीं कैसे मोदी का ध्यान रामविलास पासवान के दल पर नहीं जाता है।

परिवारवाद का मतलब यह नहीं है कि किसी नेता के परिवार का कोई व्यक्ति राजनीति में न आवे। किसी डाक्टर की संतान यदि डाक्टर है, तो पिता के बाद या उसके साथ उसके अस्पताल को संभाल सकता है. बचपन से देखे उसके अनुभव इस क्षेत्र में उसे बेहतर करने में सहायक हो सकते हैं. प्रश्न तो तब उठता है जब उसका वैसा बेटा अस्पताल सँभालने लगता है, जिसे मेडिकल साइंस की कोई जानकारी नहीं है और उसकी एकमात्र योग्यता उक्त डाक्टर की संतान होना है। संतान को उत्तराधिकारी मानना वंशवाद है। इस के उद्भव और विकास की अपनी कहानी है। निजी संपत्ति और वर्णवादी सामाजिक ढ़ाँचे के मूल में यह वंश परम्परा है। निजी मिल्कियत वाले मामलों पर तोयह लागू हो सकता है, किसी राजनैतिक दल में इसका प्रचलन अपराध कहा जाएगा, लेकिन यह परिवारवाद उससे भी अलग है। यह किसी राजनीतिक पार्टी पर उस दल के कार्यकर्ताओं की जगह एक परिवार की मिल्कियत स्थापित करता है। भारतीय राजनीति में यह प्रवृति हाल में ही विकसित हुई है।

1970 के दशक में ही समाजवादी और गांधीवादी लोग नेहरू की वंशवादी राजनीति की आलोचना करते थे। नेहरू ने अपने होते अपनी पुत्री इंदिरा को प्रधानमंत्री नहीं बनाया था। हाँ, एक बार वह कांग्रेस अध्यक्ष जरूर बनी थीं, इसके लिए भी नेहरू को दोष दिया जाता था। यह आश्चर्यजनक है कि दोषारोपण करने वाले चरण सिंह, देवीलाल, मुलायम सिंह यादव और लालू प्रसाद जैसों के परिवारजनों ने ही एक–एक पार्टी को अपनी मुट्ठी में आज लिया

हुआ है। देवीलाल का पारिवारिक दल आज भले ही दिवालिया हो गया है, एक समय वह भी सशक्त था। दक्षिण भारत में पारिवारिक दलों का एक अलग सिलसिला है। इस तरह उत्तर से दक्षिण तक परिवारवादी राजनीति के उदाहरण आपको मिल जायेंगे।

सुप्रीमोवाद का संकट अलग से है. ममता बनर्जी, नीतीश कुमार, बीजू पटनायक, अरविन्द केजरीवाल सरीखे अनेक नेता अपनी–अपनी पार्टी के सुप्रीमो हैं,जिनकी मर्जी ही पार्टी में सब कुछ है। कहा जा सकता है कि भारतीय जनता पार्टी भी लगभग इस दायरे में आ गई है। प्रधानमंत्री मोदी की मर्जी ही भाजपा में सब कुछ है।

यह वंशवाद, परिवारवाद और सुप्रीमोवाद क्यों उभरा?

चींजे तब पैदा होती हैं जब उनके लिए अनुकूलताएं बनती हैं। वर्षा होने के पहले उसके कारक और स्थितियां विकसित होती हैं। इसे कार्य–कारण सम्बंध कहते हैं। बहुत पहले मैंने बतलाया था कि सुप्रीमोवाद विकसित होने का मूल कारण दल–बदल विधेयक था। इस विधेयक को तब लाया गया था जब कांग्रेस संसद में चार सौ पार की स्थिति में थी। उसे संभवतः इस बात का एहसास था कि यह हमारी वास्तविक नहीं, हवा के झोंके में आ गई ताकत है। भय था कि यह बिखर सकता है। बोफोर्स हंगामे के बाद इसकी सम्भावना हो भी सकती थी, यदि यह विधेयक न होता। यह विधेयक नहीं था तब, इंदिरा गांधी के दौर में कई दफा कांग्रेस और दूसरे दलों का विभाजन संभव हुआ था। राजनीति में अस्थिरता चाहे जितनी हो, जनतांत्रिक आवेग उन दिनों कम नहीं था। पार्टी और उसके कार्यकर्ताओं के कोष्ठक में ही राजनीतिक दल होते थे।

दल–बदल विधेयक ने पार्टी और कार्यकर्ताओं को धीरे–धीरे हासिए पर ला दिया और पार्टी का अध्यक्ष सुप्रीमो बनता चला गया। यह सुप्रीमो थोड़ा और अनैतिक होता है तो पार्टी परिवार की पार्टी बन जाती है। इसके साथ ही परिवारवाद का सिलसिला आरम्भ हो जाता है।

दरअसल सुप्रीमोवाद के दौर में ही दल के कार्यकर्त्ता धीरे–धीरे अपने राजनीतिक धर्म से विलग होने लगने हैं। गलत के विरुद्ध प्रश्न उठाना और प्रतिरोध करना राजनीति का मूल धर्म होता है। इसकी जगह जब नेता की प्रशस्ति आरम्भ हो जाती है तब राजनीतिक कार्यकर्ता धीरे–धीरे प्रश्न उठाना और प्रतिरोध करना भूल कर प्रशस्ति का अभ्यस्त होने लगता है। उसके दल का नेता चाहता है कि वह विरोधी पार्टी के गलत–सही सभी कार्यक्रमों का विरोध करे, लेकिन अपने दल के गलत कामों पर चुप रहे। इसे दलानुशासन कहा जाता है.

यह अनुशासन कार्यकर्ताओं को अंततः एक किर्तनिया–मंडली बना कर छोड़ देता है। ऐसी किर्तनिया–मंडली को एक पारिवारिक प्रॉपर्टी में तब्दील कर देना आसान हो जाता है। इसके कुछ लाभ भी हैं। वही लाभ जो निजी मिल्कियत के होते हैं। पार्टी को चलाने की जिम्मेदारी एक परिवार की हो जाती है। जाति और धर्म की बुनियाद पर एक समर्थक मंडल मिल जाता है। प्रायः अपराधी गुंडे भी अपनी हिफाजत केलिए जाति और धर्म का सहारा लेते है और मिल भी जाते हैं इन नेताओं को भी मिल जाते हैं। वास्तविक उद्देश्य केवल और केवल परिवार केलिए राजनीतिक शक्ति हासिल करना होता है, लेकिन कुछ मूल्यों के ताबीज ये जरूर धारण करते हैं। इन ताबीजों की आसमानी ताकत का इन्हें भरोसा होता है।

लेकिन, दलों का आंतरिक लोकतंत्र ख़त्म हो जाता है। प्रतिरोध की आवाज कुंद हो जाती है। नतीजतन राजनीतिक दल एक कंपनी की तरह काम करने लगता है। ऐसी कोई कंपनी देश–समाज में जनतंत्र की हिफाजत कभी नहीं कर सकती। जनतंत्र केलिए जनतांत्रिक आवेग, राजनीतिक दल, विचार, नैतिकता और कार्यकर्ता जरूरी होते हैं।

<u>प्रताड़ित हिन्दुयों को नागरिकता –</u>

नागरिकता कानून में संशोधन लागू हो गया है। अब पाकिस्तान बांग्लादेश और अफगानिस्तान के आये हिंदू भारत में रह सकते हैं लेकिन मुसलमान नहीं रह सकते। इस संबंध में विपक्ष दो गुटों में बंटा हुआ है। अरविंद केजरीवाल तथा कुछ अन्य लोग यह प्रचार कर रहे हैं कि इससे कई करोड़ पाकिस्तानी हिंदू भारत में आ जाएंगे। भारत की आबादी बढ़ जाएगी, भारत में अव्यवस्था हो जाएगी, हम रोजगार नहीं दे सकेंगे, इसलिए विदेशियों को भारत में आने से रोक देना चाहिए चाहे हिंदू हो या मुसलमान। दूसरी ओर कांग्रेस पार्टी तथा कुछ अन्य दलों का कहना है कि हिंदू मुसलमान में भेद नहीं करना चाहिए सबको भारत की नागरिकता दे देनी चाहिए चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान। सरकार ने इन दोनों के बीच का मार्ग चुना है अर्थात सरकार मुसलमान को मुस्लिम देशों में प्रताड़ित नहीं मान रही है हिन्दुओं को प्रताड़ित मान रही है इसलिए हिन्दुओं को शरणार्थी माना जा रहा है और मुसलमान को घुसपैठिया। अरविंद केजरीवाल ने जो कहा वह बात ठीक नहीं दिखती है क्योंकि कानून के अनुसार 2014 के पहले आने वाले हिंदू ही शरणार्थी माने जाएंगे 2014 के बाद वाले नहीं। इस तरह अरविंद जी की यह धारणा ठीक नहीं है कि कई करोड़ पाकिस्तानी हिंदू भारत में आ जाएंगे। दूसरी ओर अन्य अनेक लोगों ने

यह आशंका व्यक्त की है कि भारत के रहने वाले घुसपैठिए मुसलमानों को धीरे–धीरे निकाल दिया जाएगा। यदि ऐसा होता है तो मेरे विचार से इसमें कुछ भी गलत नहीं है। जिन लोगों ने चोरी छिपे भारत में आकर रहना शुरू कर दिया है, उनमें से यदि कुछ लोगों को चुन–चुन कर निकाल दिया जाए तो इसमें गलत क्या है। मैं समझता हूं कि भारत सरकार ने जो किया है वह बहुत ही ठीक किया है और विपक्ष को इस विषय में एक स्पष्ट राय देनी चाहिए। सबसे पहले तो विपक्ष को यह बात साफ करनी चाहिए कि वह अरविंद केजरीवाल के विचारों से सहमत है अथवा कांग्रेस के विचारों से दोनों विचार विरोधाभासी हैं।

केरल से भी साम्यवाद समाप्ति की ओर–

देश बिल्कुल ठीक दिशा में जा रहा है। अब केरल में भी अगले चुनाव में साम्यवाद समाप्त होने वाला है।अनुमानों के अनुसार केरल की अधिकांश सीट कांग्रेस को मिलने वाली है। बंगाल में साम्यवाद को ममता ने समाप्त कर दिया और बचा खुचाअब केरल से भी बाहर जा रहा है। साम्यवाद का समाप्त होना, भारत के आम जनता की विजय है। साम्यवाद समाप्त हो जाएगा तो अगला नंबर इस्लाम का लगेगा और इस्लाम और साम्यवाद जब दोनों खत्म हो जाएंगे तब बची खुची कांग्रेस भी समाप्त हो जाएगी। मुझे इस बात की खुशी है की दुनिया से साम्यवाद के समापन की शुरुआत भारत से हो रही है। इस्लाम के भी समापन की शुरुआत भारत से ही होगी। भारत की जनता इस बात के लिए बधाई की पात्र है, अगले आम चुनाव की प्रतीक्षा कीजिए।

चुनाव की तारीख घोषित हो गई है सभी राजनीतिक दल चुनाव प्रचार में सक्रिय हो गए हैं। जनता भी धीरे–धीरे चुनाव के लिए तैयार हो रही है। यह बात साफ दिख रहा है कि इस बार का चुनाव अन्य चुनावों से कुछ अलग होगा अर्थात पहले के चुनाव सरकार बनाने के लिए लड़े जा रहे थे। इस बार का चुनाव इस बात पर लड़ा जा रहा है कि संविधान संशोधन का अधिकार वर्तमान भारतीय जनता पार्टी की सरकार को मिलना चाहिए या नहीं मिलना चाहिए। क्या मोदी सरकार का दोतिहाई बहुमत आना चाहिए इस बात पर देश में बहस छिड़ी हुई है। अधिकांश हिंदू इस बात से सहमत हैं की वर्तमान सरकार को दो तिहाई बहुमत मिलना चाहिए। जबकि भारत के मुसलमान कम्युनिस्ट और इन दोनों के समर्थक विपक्षी नेता पूरी जोर शोर से इसके विरुद्ध प्रचार कर रहे हैं कि सरकार को दो तिहाई बहुमत मिलना खतरनाक होगा। क्योंकि यदि दो तिहाई बहुमत मिलेगा तो सरकार मनमाने संविधान संशोधन कर सकती है। मेरा अपना विचार है कि जब तक संविधान संशोधन का अधिकार वर्तमान सरकार को नहीं

मिलेगा तब तक वर्तमान सरकार अपनी सफलता सिद्ध नहीं कर पाएगी। इसलिए भारत की जनता को इस विषय पर गंभीरता से सोचना चाहिए कि सरकार को पूरी ताकत देने की जरूरत है। कम्युनिस्ट और मुसलमान मिलकर सरकार को दो तिहाई बहुमत से ना रोक सके यह बात गंभीरता से समझने की जरूरत है।

लूटमार वाली है बैलेट प्रणाली–

कांग्रेस पार्टी पुराने जमाने में वैलेट पेपर में भ्रष्टाचार करके ही चुनाव जीता करती थी। बूथ कब्जा होता था और क्या–क्या घपला होते थे वह सब हम लोगों ने बहुत बार देखा है। लेकिन जब से ईवीएमआई है उस तरह के घपले या तो कम हो गए हैं या समाप्त हो गए हैं। कांग्रेस पार्टी पिछले 30–40 वर्षों में ईवीएम का उपयोग करके लगातार चुनाव हारते जा रही है और अब उन्होंने यह मान लिया है कि हम नरेंद्र मोदी से जीतने की क्षमता नहीं रखते। इसलिए वे जानबूझकर अब यह चाहते हैं कि किसी तरह पुराने जमाने को ही ला करके चुनाव जीता जा सकता है, अन्यथा और कोई उपाय नहीं है। इसलिए कांग्रेस पार्टी सारा प्रचार छोड़कर, सारे प्रयत्न छोड़कर वही लूटमार वाली बैलेट प्रणाली लागू कराना चाहती है।मुझे विश्वास है कि सुप्रीम कोर्ट और भारत की जनता फिर से उस प्रणाली को लागू नहीं होने देना चाहेगी और हम लोग अब धीरे–धीरे कांग्रेस पार्टी की शव यात्रा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कांग्रेस पार्टी को यातोजन जागरण पर विश्वास करना पड़ेगा अन्यथा समाप्त होने के अलावा कोई उपाय नहीं है।

यदि लक्ष्य चुनाव है तो गाँधी नाम की दुकानदारी क्यों?–

3 दिन से बनारस में था वहां दल मुक्त भारत का कार्यक्रम चल रहा था। उस कार्यक्रम में तीसरे दिन गांधीवादी और कम्युनिस्ट ही वक्ता थे। सभी वक्ताओं ने एक स्वर से नरेंद्र मोदी की आलोचना की। पूरा कार्यक्रम चुनावी था मंच से हर आदमी यही कह रहा था कि इस चुनाव में नरेंद्र मोदी को नहीं जितने देना है। मैं अकेला मंच पर था जिसने इस बात पर प्रश्न उठाया था कि क्या गांधीवादियों का यही काम है? गांधी कभी सत्ता की राजनीति से जुड़े हुए नहीं थे, गांधी किसी संपत्ति के लिए नहीं लड़ रहे थे, गांधी किसी पद के लिए नहीं लड़ रहे थे। आज जो भी वक्ता यहां मंच से भाषण दे रहे हैं, वह सत्ता संपत्ति और पद की लड़ाई में लिप्त है। गांधी लोकस्वराज्य की लड़ाई लड़ रहे थे और हमारे गांधीवादी संपत्ति की लड़ाई लड़ रहे हैं मैं नहीं समझता कि गांधी की दिशा के विपरीत गांधीवादी क्यों जा रहे हैं। मैंने यह प्रश्न भी जोरदार तरीके से उठाया कि यदि आपको राजनीति ही करनी है। यदि आपको चुनाव में ही सक्रिय होना है तो गांधी नाम की दुकानदारी क्यों कर रहे हैं? आप किसी के

भी पक्ष में काम कीजिए लेकिन गांधी के नाम का दुरुपयोग मत कीजिए। मेरे भाषण की श्रोताओं ने प्रशंसा की और मंच पर बैठे लोग भी मेरे भाषण का विरोध नहीं कर सके। मैं यह महसूस करता हूं कि गांधीवादी पूरी तरह गलत दिशा में जा रहे हैं। सत्ता संपत्ति और पद के लिए लड़ना गांधी विचार से मेल नहीं खाता।

हिन्दू विरोधी संविधान में संशोधन की जरूरत–

मैं अपने जीवन की शुरुआत से ही यह मानता रहा कि भारत का संविधान बनाने में राजनेताओं की नियत खराब थी। कालांतर में यह बात साफ–साफ देखी गयी कि हमारे राजनेताओं ने इस संविधान का दुरुपयोग किया और उसमें मनमाने संशोधन किया। संविधान का स्वरूप तो शुरुआत से ही गड़बड़ था लेकिन बाद में तो वह एक पक्षीय रूप से हिंदुओं के विरुद्ध हथियार के रूप में प्रयोग होने लगा। अब समय बदल रहा है, अब संविधान संशोधन का अधिकार हिंदू समर्थकों के पास आने की परिस्थितियां बन रही हैं। विपक्षी दलों ने भी यह स्वीकार किया है कि सरकार तो हिंदू समर्थकों की ही बनेगी। हिंदू समर्थकों को संविधान संशोधन का अधिकार नहीं मिलना चाहिए इस बात की लड़ाई हो रही है।

मैं आप सब का आह्वान करता हूं कि यह निर्णायक समय है। इस समय हम सब लोगों को सक्रिय होकर इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि हम संविधान संशोधन का अधिकार प्राप्त होने तक इस संघर्ष में सक्रिय रहेंगे। जब तक हिंदू विरोधियों के हाथों से संविधान मुक्त नहीं हो जाता तब तक हम किसी भी प्रकार से बराबरी का अधिकार नहीं प्राप्त कर सकते। इसलिए मेरा आपसे निवेदन है कि आप अगले चुनाव में विपक्षी दलों को जो इस्लाम समर्थक हैं इतना कमजोर कर दीजिए कि वे भविष्य में सर भी ना उठा सकें। हमें संविधान में व्यापक संशोधन चाहिए, हमें संविधान संशोधन का अधिकार चाहिए।

न्याय और सुरक्षा देना राज्य का लक्ष्य होता है और कानून उसका मार्ग। यदि कानून का पालन करना लक्ष्य मान लिया गया तो अव्यवस्था निश्चित है। यदि कानून और न्याय के बीच दूरी बढ़ जाती है तब कानून की समीक्षा की जाती है न्याय की नहीं।

"जीवन पथ" श्री नरेन्द्र रघुनाथ सिंह द्वारा उपन्यास शैली की रचना है।इसके लिखने का कालखण्ड 2011 से 2017 तक रहा। वस्तुतःयह उपन्यास समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र एवं अर्थशास्त्र के उन सिद्धान्तों पर आधारित है जो अनुसंधान रामानुजगंज सरगुजा छत्तीसगढ़ के जंगलों में दशकों तक श्रद्धेय बजरंग मुनि जी ने अपनी विलक्षण बौद्धिक क्षमता और सामाजिक मूल्यों के प्रति अगाध समर्पण के बल पर किया। श्री नरेन्द्र जी की साहित्यिक क्षमता और इन सामाजिक विषयों के प्रति गहरी समझ ने कई मूर्धन्य विचारको तक को प्रभावित किया है। आप सब विद्वानों, सुधीजनों एवं सामाजिक विषयों के प्रति रूचि रखने वाले पाठकों से मेरा विनम्र निवेदन है कि ज्ञान तत्व में क्रमशः प्रकाशित "जीवन पथ" उपन्यास की कड़ियों पर अपनी राय जरूर रखें।

जीवन पथ

लेखकीय दृष्टिकोण

सदैव से ही जब से जीवन की सृष्टि हुई है, मनुष्य ने अनेक दृष्टिकोण के आधार पर जीवन का प्रबन्ध किया है। यथार्थ की समीक्षा का सिद्धान्त यह सिद्ध करता है कि कुछ सर्वकालिक सिद्धान्तों की प्रासंगिकता जीवन में सदैव बनी रहती है तो व्यक्ति अनेक में यथास्थिति परिवर्तन करके भी उन्हें स्वीकार किए रहता है। वस्तुतः व्यवस्था की स्थापना के सन्दर्भ में यह यथास्थिति परिवर्तन का दृष्टिकोण ही, जिसे हम विश्लेषण या समीक्षा का नाम भी दे सकते हैं, हमे प्रकृति के उपभोग का अर्थ सिखाता है। यदि किसी सिद्धान्त में जड़ता है और कोई मनुष्य या मनुष्यों का समूह उसे प्रतिबद्धता पूर्वक स्वीकार किए रहता है तो उसे हठवादिता कहना ही ठीक रहेगा। मूलतः व्यवस्था जीवन में यथार्थ की कसौटी पर खरी उतरनी चाहिए। यदि किसी व्यवस्था में यह गुण न हो तो उसे प्रगतिशीलता की बाधा कहना उचित रहेगा। जीवन के प्रबन्ध के सन्दर्भ में यह यथार्थ का दर्शन है। वस्तुतः दर्शन, जीवन की कसौटी है। व्यावहारिक जीवन की जिस किसी भी सन्दर्भित वस्तुस्थिति से दर्शन के महत्व को नकार दिया जाता है तो वह वस्तुस्थिति अथवा जीवन–पथ, भ्रष्ट हो जाता है। जीवन में जब कभी–भी ऐसी संक्रामक स्थिति उत्पन्न होती है तो मनुष्य–मात्र का यह दायित्व सिद्ध होता है कि वह व्यावहारिक जीवन से जड़ सिद्धान्तों का उन्मूलन करे। मनुष्य–मात्र के ये प्रयास मानवता के परिप्रेक्ष्य में होने चाहिए, ये किसी भी स्तर पर व्यक्तिवाद की सीमा में बंधे हुए न हों! प्रस्तुत उपन्यास की विषयवस्तु में मैने दर्शन के गुण–धर्म को मानक मानकर समाज में व्यवस्था के ढाँचे के निर्माण में भूमिका निभाने वाले विषय समाज, न्याय, धर्म, अर्थ, संविधान, राज्य व राष्ट्र के गुण–धर्म की विवेचना करते हुए इन विषयों की व्यावहारिक कार्य प्रणाली की चर्चा की है। जिनका सारांश विषय के परिचय प्रबन्ध में प्रस्तुत है–

व्यवस्था का अर्थ–

व्यावहारिक अनुभव से यह बात सहजता पूर्वक प्रत्यक्ष होती है कि प्रबन्ध व्यक्ति की मौलिक चेतना की अनुभूति है। व्यक्ति अपनी प्रत्येक क्रिया को किसी न किसी प्रकार प्रबन्धित करता ही है, यद्यपि वह पूर्ण या अपूर्ण हो सकती है। जीवन में व्यवस्था का नियोजन व्यक्ति की

इसी मौलिक चेतना का परिणाम है। लेकिन व्यक्ति की मौलिक चेतना से उत्पन्न इस व्यवस्था में कोई नियन्त्रण प्रणाली नहीं है, कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यह तो ऐसा गुण प्रधान प्रबन्धन होता है जोकि क्रिया के आरम्भ से शुरु होता है और समापन के साथ समाप्त हो जाता है। मूलतः यह मौलिक व्यवस्था का गुण है। जबकि व्यवहार जगत में हमें कई प्रकार की व्यवस्था की आवश्यकता होती है। हमारी स्वचेतना का प्रबन्धतन्त्र हमारे व्यवहार जगत की व्यवस्था की आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर पाता है, इसका क्या कारण है? इस विषय में मैं यह कहुँगा कि सृष्टि के प्रारम्भ से दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ अस्तित्व में है– सात्विक प्रवृत्ति और असात्विक प्रवृत्ति। सात्विक प्रवृत्ति के लोगों की संख्या बहुत अधिक होती है और असात्विक प्रवृत्ति के लोगों की बहुत कम, किन्तु असात्विक (दुष्ट) प्रवृत्ति के लोग बहुत शक्तिशाली होते हैं, क्योंकि ऐसे लोग बहुत अवसरवादी और शक्ति संग्रह के विषय में बहुत चालाक होते हैं। सामान्यतया सात्विक प्रवृत्ति के लोगों के समूह को समाज कहते हैं और असात्विक प्रवृत्ति के लोग समाज विरोधी होते हैं। समाज और समाज विरोधी तत्वों के बीच सदैव संघर्ष चलता रहता है। समाज विरोधी तत्वों पर समाज के नियन्त्रण तथा समाज के सुचारु रुप से संचालन की प्रक्रिया को व्यवहार जगत में व्यवस्था कहते हैं।

जीवन और समाज व्यवस्था–

जीवन की व्युत्पत्ति नैसर्गिक रुप से होती है और इसका भौतिक प्रबन्धन समाज व्यवस्था के द्वारा। समाज व्यवस्था के गुण–धर्म की विवेचना हेतु इसके अन्वेषकों के समक्ष अक्सर यह प्रश्न होता है कि समाज क्या है? इसका यर्थाथपरक प्रबन्ध कैसे हो? क्योंकि जीवन की गतिशीलता समाज के लोक व्यवहार में नित नए परिवर्तन करती रहती है। वास्तव में समाज–विज्ञान का कोई भी अन्वेषक इन प्रश्नों की उत्पत्ति के कारण में जीवन का प्रबन्ध खोजता है। समाज मूलतः किसी जैविक इकाई के रुप में उत्पन्न नहीं होता है और न भौतिक व्यवस्था का जन्म प्रकृति के गर्भ से हुआ है। इनके निर्माण में कोई ऐसा भौतिक तत्व भी शामिल नहीं है, जिसके गुण–धर्म का अन्वेषण हम किसी प्रयोगशाला में कर सकें! इन प्रश्नों में सत्यता निहित है, लेकिन सत्य तो यह भी है कि हमारे लोक व्यवहार से समाज भी प्रत्यक्ष होता है। क्योंकि यह ठीक है कि समाज की जीवन की तरह भौतिक उत्पत्ति नहीं होती है किन्तु यह भी सत्य है कि इसकी जीवन के प्रबन्ध के लिए व्यावहारिक संरचना तो होती ही है। जीवन की मूल–भूत आवश्यकताएं एवं व्यक्ति की परस्पर निर्भरता स्वतः ही समाज नाम की संस्था को आकृति प्रदान कर देती हैं। इस वस्तुनिष्ठ तर्क के आधार पर सार्वभौमिक समाज आकृति धारण करता चला जाता है। वस्तुतः यह सिद्धान्त है कि समाज नाम की संस्था का निर्माण व्यक्ति की जैविक अनुभूतियों के द्वारा आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही होता है। हाँ कुछ प्रश्न इसके भौतिक ढाँचे के विषय में अवश्य उत्पन्न होते हैं, जैसे कि इसे कैसे व्यवस्थित किया जाए, क्योंकि इसमें रुढ़ियों के जाल में उलझे हुए तथाकथित धर्म, पन्थ और सम्प्रदाय हैं, तथाकथित सभ्यता के झण्डाबरदारों की जातियां और वर्ग हैं, आर्थिक असमानता है, राजनीतिक वैमनस्य है, जीवन पर शासन करने के ऐसे–ऐसे आश्चर्यचकित करने वाले व्यक्ति जनित उपाय हैं जो समाज की मूलभूत आकृति को छिन्न–भिन्न कर देते हैं। इन विचित्र और विषमयकारी स्वार्थ सिद्ध परिस्थितियों में भौतिक समाज स्वयं को कैसे सन्तुलित रख सकता है! एक सामाजिक अनुसंधान से मैने यह सिद्धान्त प्राप्त किया है कि व्यक्ति आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तो

विशुद्ध भूमण्डलीकृत जीवन शैली स्वीकार करता आया है लेकिन निजता की रक्षा का बहाना करके व्यक्ति नें व्यक्तिवादी रुढ़ियों का किसी पवित्र सिद्धान्त की तरह पालन किया है। प्रस्तुत तथ्य के अनुसार व्यवस्था के ढाँचे का निर्माण करने के लिए हमे निजता एवं भूमण्डलीकरण नामक विषयों को भी परिभाषित करना चाहिए, क्योंकि समाज की संरचना के दृष्टिकोण की व्याख्या इस तर्क के आधार पर होनी चाहिए कि समाज व्यवस्था की व्यवस्थागत इकाई में सत्ता भाव नहीं होता है और यदि ऐसा होता है तो वह इकाई सामाजिक संस्था नहीं है। वस्तुतः व्यक्ति के चरित्र पर व्यवस्था का गुणात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए समाज में भौतिक व्यवस्था के ढाँचे की संरचना सरकार के विधि प्रयोजन के अनुसार न होकर स्वराज्य की अवधारणा के आधार पर होनी चाहिए। प्रस्तुत विषय में इस अवधारणा की विवेचना की गयी है।

समाज व्यवस्था की संरचना का आधार–

समाज व्यवस्था के प्रबन्धकीय स्वरुप की विवेचना करने के क्रम में इसकी संरचना की सैद्धान्तिक अवधारणा की सूक्ष्म विवेचना करनी उपयुक्त होगी। एक सामाजिक अनुसंधान से मुझे यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि समाज में मौलिक व्यवस्था की स्थापना समाज के विभिन्न स्तरीय निकायों के दो स्वरुपों की क्रमिक अवस्थापना के अनुसार होती है। जिनमें प्रथम और तार्किक क्रम है– व्यक्ति–परिवार–गाँव अथवा शहर (या विभाजित इकाई)–जिला–प्रदेश–देश–समाज अथवा विश्व; देश, समाज व्यवस्था का अंग होता है, वह समाज व्यवस्था से कोई स्वतन्त्र इकाई नहीं होता है। यद्यपि यह सम्भव है कि वैश्विक समाज व्यवस्था की विभिन्न राष्ट्रीय और स्थानीय इकाईयों में इन व्यवस्थागत इकाईयों के नाम व आकृति जरा बहुत बदल जाते हों लेकिन अन्ततः यह क्रम समाज की मूल–भूत इकाई से लेकर वैश्विक आधार तक प्रत्येक इकाई द्वारा निजता की सीमाओं को संरक्षित रखते हुए अपना सामाजिक विस्तार कर, उत्तरोत्तर इकाई में परस्पर समावेश का स्वनिर्मित प्रारुप है। व्यवस्था की स्थापना का यह क्रम समाज में विभिन्न स्तर पर आवश्यकता के अनुसार शक्ति विभाजन का मार्ग प्रशस्त करता है। क्योंकि इस क्रम की प्रत्येक व्यवस्थागत इकाई में उसके स्तर के अनुसार समाज की वास्तविक आकृति का समावेश होता है। इस विषय से सम्बन्धित दूसरा व रुढ़ क्रम है, व्यक्ति–परिवार–कबीला अथवा कुटुम्ब–जाति–सम्प्रदाय व पन्थ–वर्ग संघर्ष में उलझा हुआ देश व समाज! यद्यपि आधुनिक समाज में यह क्रम भी पहले अर्थात वास्तविक क्रम का आश्रय पाकर ही किसी न किसी प्रकार जीवित रहता है किन्तु इसका मूल दोष यह है कि यह प्रकार समाज के आन्तरिक ढाँचे में अपने स्वभाव के अनुसार विभिन्न व्यक्तियों के बीच वैचारिक अन्तरविरोधों, रुढ़ियों एवं जड़–धारणाओं के पनपने के अवसर उत्पन्न करता है तथा व्यवस्थागत शक्ति के गलत नियोजन व सत्ताखोर लोगों की नीयत खराबी के कारण समाज में व्यवस्थागत ढाँचे के निर्माण व निर्वहन का व्यावहारिक प्रतिनिधित्व कर रहा है। इसे समाज का दुर्भाग्य कहना ही ठीक रहेगा कि हमारी संवैधानिक व्यवस्था भी इस दूसरे क्रम को न केवल विधिक मान्यता प्रदान करती है बल्कि इसकी संरचना में भी इस तथाकथित क्रम की भूमिका होती है। भले ही हमारी संवैधानिक व्यवस्था इस सत्य को सैद्धान्तिक रुप से नकारती हो, लेकिन मौजूदा सामाजिक ढाँचे की बिनाह पर किया गया अनुसंधान राज्य के इस वक्तव्य को तर्कहीन सिद्ध कर देता है। व्यक्ति को सामाजिक तथा राज्यगत व्यवस्था के ढाँचे से इस दूसरे तथाकथित क्रम के प्रभाव का उन्मूलन करना होगा। वस्तुतः व्यवस्था का प्रथम क्रम उपयुक्त है क्योंकि इसकी व्यवस्थागत इकाईयों में

सामाजिक गुण स्वतः निहित रहता है। हमारा सम्पूर्ण व्यवस्था तन्त्र (सामाजिक व राजनीतिक) इस प्रथम क्रम पर आधारित होना चाहिए। यह व्यवस्था की आवश्यकता है।

धर्म और उसका स्वरुप–

व्यवहार जगत में धर्म ऐसा विषय है जिसे समाज में अनेक दृष्टिकोण से परिभाषित किया गया है। यह बड़ा ही दिग्भ्रमित करनें वाला विषय है कि नितान्त अन्तरधार्मिक समानता की बातें करने वाला व्यक्ति भी आचरण के समय अपने संगठनात्मक धर्म को ही सर्वोपरि मानता है। व्यवहार जगत में मुझे, मनुष्य की यह प्रवृत्ति किसी मानसिक रोग से ज्यादा महसूस नहीं हुई। अलबत्ता इस वैचारिक जड़ता के अध्ययन से मुझे यह तर्क अवश्य प्राप्त हुआ है कि व्यवहार जगत में धर्म के दो स्वरुप प्रकट हैं, जिनमें पहला व मूल स्वरुप गुण प्रधान है। यह स्वरुप व्यक्ति के गुण, कर्म, स्वभाव का प्रतिनिधित्व करता है जिससे व्यक्ति देशकाल परिस्थिति के अनुसार मार्गदर्शन प्राप्त करता है। धर्म का दूसरा व रुढ़ स्वरुप संगठन प्रधान होता है। इसमें व्यक्ति की संगठनात्मक पहचान जैसे चोटी–दाढ़ी, वेश–भूषा, नाम, संख्या, पूजा–पद्धति व संगठन इत्यादि का नीतिगत महत्व रहता है। धर्म का यह तथाकथित स्वरुप ही आधुनिक सामाजिक ढाँचे का प्रतिनिधित्व कर रहा है, जिसके परिणाम स्वरुप समाज, सम्प्रदायों में विभक्त है। यह गम्भीर चिन्तन का विषय है कि क्या धर्म का दर्शन समाज के विभाजन का आधार प्रस्तुत कर सकता है? लेकिन व्यवहार जगत में तो यह विषय सत्य के रुप में स्थापित है। मेरे विचार से धर्म के इस रुढ़ स्वभाव का उन्मूलन होकर समाज में सर्वथा इसके गुण प्रधान स्वरुप की स्थापना होनी चाहिए। मूलतः धर्म, जीवन के सापेक्ष विषय है, यह कभी–भी निरपेक्ष नहीं होता है, यह देशकाल परिस्थिति के अनुसार हमारा मार्ग दर्शन करता है। प्रस्तुत उपन्यास की विषय–वस्तु में ऐसी शंकाओं का निराकरण करने का प्रयास किया गया है।

समाज के परिप्रेक्ष्य में धर्मनिरपेक्षता, सार्थक या निरर्थक –

यथार्थ के सामाजिक ढाँचे का आकलन करते हैं तो पाते हैं कि हमारा राजनीतिक व धार्मिक नेतृत्व समाज को अपनी सत्ता स्थापना के लिए लगातार वर्ग संघर्ष के लिए गुमराह कर रहा है और इसे विडम्बना कहना ही ठीक रहेगा कि मानव सभ्यता के इतिहास में सहिष्णुता व निरपेक्षता को अपनी जीवनचर्या से स्फूर्त करने वाला भारतीय समाज, आज उधार के दर्शन का अनुकरण कर अपनी संस्कृति के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगा रहा है। यह उधार का दर्शन क्या है? इस समय मैं धर्मनिरपेक्षता के अस्तित्व पर प्रश्न कर रहा हूँ, क्योंकि यह धर्मनिरपेक्षता, जिसे भाषाविदों ने सैक्युलरिज्म (समाजवाद) के मायने के रुप में भी तब्दील किया है, उन्होने धर्म व संगठन के गुणधर्म में कोई अन्तर नहीं किया या यूँ कहें कि दुनिया को सैक्यूलरिज्म अथवा तथाकथित धर्मनिरपेक्षता (साम्प्रदायिकता) को जन्म देने वाले आधुनिक सभ्यता के मार्गदर्शकों ने धर्म व संगठन के दर्शन को समझा ही नहीं था! दुनिया का कोई भी व्यक्ति इस विषय का अनुसंधान करे और यह सिद्ध करे कि क्या कोई भी संगठन किसी अन्य संगठन से स्पर्धा के समय निरपेक्ष रह जाता है? क्योंकि उसने यदि ऐसा किया तो निश्चित रुप से उसका अस्तित्व अन्य संगठनों में गौण हो जाएगा और कोई भी संगठन भला अपने अस्तित्व को समाप्त कैसे होने दे सकता है? दुनिया भर में धर्म निरपेक्षता का दर्शन विभिन्न कथित धार्मिक (साम्प्रदायिक) संगठनों के संघर्ष के समय समाज के वर्गो का निरपेक्षता पूर्वक मार्गदर्शन नहीं

कर पाता है और समाज जगह–जगह पर साम्प्रदायिक संघर्षो का शिकार हो जाता है। मूलतः मैं यहाँ पर यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हमे समाज को निरपेक्ष बनाने के सतत प्रयास करने चाहिए, यदि हम ऐसा कर पाए तो समाज से साम्प्रदायिकता का अस्तित्व स्वतः ही समाप्त हो जाएगा और समाज धर्माचरण से ओत–प्रोत हो जाएगा। यद्यपि यह कार्य व्यक्ति–मात्र के लिए दुर्लभतम लक्ष्य की तरह है जिसे प्राप्त करना सरल कार्य नहीं है। लेकिन समाज के विभिन्न पन्थों को, जिन्हें हम कथित तौर पर धर्म के रुप में स्वीकार करते हैं, उनके झण्डाबरदारों को धर्म के दर्शन की मीमांसा करनी चाहिए और उस मीमांसा के परिणाम स्वरुप जो सार्वभौमिक सिद्धान्त प्राप्त हों उसे अपने अनुयायियों को संयुक्त रुप से पालन करने का निर्देश देना चाहिए।

इस विषय को और भी विस्तार पूर्वक समझने के लिए मैं भारतीय दर्शन के वैचारिक प्रभाव को स्वीकार करना श्रेयष्कर समझता हूँ कि उसने धर्म का प्रत्यक्षीकरण किस प्रकार किया है? यह हमे शिक्षा देता है कि धर्म की कोई निश्चित आकृति नहीं होती, बल्कि यह तो देशकाल परिस्थिति के अनुसार अपनी आकृति धारण करता है। लोकतन्त्रीय राज्य में धर्म, न राज्य को निर्देशित करता है और न राज्य से अपने लिए निर्देश पाता है। इस सिद्धान्त का समाज की आकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। क्योंकि जो अवधारणा समाज को वर्गों में विभाजित कर देती है उसे पन्थ अथवा सम्प्रदाय ही कहा जा सकता है, धर्म का इससे कोई सम्बन्ध नहीं होता। मुझे नहीं पता कि दुनिया में इस धर्मनिरपेक्षता (सैक्यूलरिज्म) नाम के शब्द की व्युत्पत्ति कब और किस प्रकार हुई? क्योंकि समाज के सार्वभौमिक अर्थ को समझते हुए जीवन में मैने धर्म के जिस दर्शन को स्वीकार किया है उसमें किसी पन्थ एवं जाति की अपेक्षामें न तो व्यक्ति का स्वतन्त्र अस्तित्व गौण होता है और न समाज का। जरा समाज के मूल स्वरुप को समझते हुए व्यक्ति–मात्र समाज के सन्दर्भ में धर्म के दर्शन को प्रत्यक्ष तो करे, वह स्वयं से पूछे कि धर्म क्या है? क्योंकि जब तक दुनिया में सम्प्रदायवाद की अभिरक्षा के लिए धर्म को अनावश्यक रुप से निरपेक्ष कहने की गलती की जाती रहेगी तब तक जनसामान्य धर्म के गुण प्रधान स्वरुप को समझ ही नहीं पाएगा। धर्म कोई सम्प्रदाय या पन्थ नहीं होता है जो कभी इसे निरपेक्ष कहने या बनाने की कोशिश करनी पड़े। यदि निरपेक्षता के सन्दर्भ में ही धर्म को देखा जाए तो यह समाज का इस प्रकार मार्गदर्शन करता है कि इससे निरपेक्षता स्वतः ही उत्पन्न होती है, और निरपेक्षता का यही भाव, समाज में किन्हीं घटनाओं के प्रभाव से उत्पन्न हुए पन्थ, वर्ग और जातियों का निरपेक्षीकरण कर समाज में विलीन करने का मार्ग प्रशस्त करता है। लेकिन समाज पर सत्ता की स्थापना के लिए तथाकथित धर्मरक्षक और राजनेताओं ने धर्म के मूल स्वभाव को विश्मृत करके तथा सम्प्रदाय व पन्थ को धर्म के रुप में महिमामण्डित करके समाज के मूल स्वरुप को ही नष्ट कर दिया है। मैं आधुनिक समाज के विभिन्न घटकों से यह प्रश्न करना चाहता हूँ कि विभिन्न अवसरों पर अपनी–अपनी संगठनात्मक पहचान को अनावश्यक रुप से परिलक्षित करते हुए क्या किसी पक्षहीन (वर्गहीन) समाज की रचना की जा सकती है? सम्प्रदाय एवं पन्थ का सन्दर्भित अर्थ ध्यान में रखते हुए हमे निरपेक्षता की परिभाषा पर जरा चिन्तन करना चाहिए! किसी पन्थ का कोई अवधारक जब अन्य की अवधारणा, भावना, परम्परा एवं सामाजिक ढाँचे के विरुद्ध कार्य करता है तो पहले उसे यह विचार भी कर लेना चाहिए कि ऐसा करके उसके सामने क्या परिणाम आनें वाला है? क्योंकि यदि हम समाज को निरपेक्ष बनाना चाहते हैं तो हमे पन्थ के महत्व को मृतप्राय करना ही होगा। अन्यथा पन्थ, जाति और

वर्ग के आधार पर सत्ताखोरी करने वाले लोग समाज के वर्गों को ऐसे रास्तों पर जाने के लिए गुमराह करते रहेंगे। क्या आधुनिक समाज ऐसे ही परिवेश में जीवन व्यतीत करता रहेगा? व्यक्ति मात्र को इस विषय पर अवश्य विचार करना चाहिए।

राजनीति का अर्थ और स्वरुप–

सामान्य व्यवहार में राजनीति के अर्थ पर विचार करें तो यह राज्य के प्रबन्ध की नीति के रुप में प्रत्यक्ष होता है। इसे राजनीति का लोकतन्त्रीय स्वरुप भी कहा जा सकता है। लेकिन समाज पर राज्य के व्यवस्थागत प्रभाव के कारण समाज के सामान्य व्यवहार में लोग राजनीति के वास्तविक गुण–धर्म से अलग इसे भेद–नीति के रुप में भी स्वीकार करते हैं। राज्य की कुटिलता के इस दुष्प्रभाव के कारण जन–सामान्य की मानसिकता राजनीति को व्यवस्था की प्रबन्ध नीति से बदलकर शासनकर्ता की नीति के रुप में स्वीकार कर लेती है। यह मानसिक प्रभाव व्यक्ति और व्यवस्था के बीच व्यावहारिक दूरी को बढ़ा देता है और इस नीति का वास्तविक प्रभाव राज्य की असफलता तथा व्यवस्था के प्रति समाज के असन्तोष के रुप में सामने आता है। प्रस्तुत उपन्यास की विषय–वस्तु के परिचय प्रबन्धमें, मैं यह विषय इंगित करूँगा कि राजनीति का अर्थ, व्यवस्था को शासन प्रणाली के रुप में स्थापित करने में नहीं बल्कि व्यवस्था के प्रबन्धमें निहित होता है। क्योंकि प्रबन्ध अपने नियामक के प्रति उत्तरदायी होता है और लोकतन्त्र में शासन, जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। वस्तुतः यह निष्कर्ष राजनीति के स्वभाव को शासननिष्ठ अथवा व्यक्तिवादी व्यवस्थानिष्ठ के स्थान पर समाजनिष्ठ (वस्तुनिष्ठ या समाज केन्द्रित) बनाने का मार्ग प्रशस्त करता है। व्यवस्था पालन में इस नीति का अनुकरण करने से लोकतन्त्र सबल और जीवन पद्धति में प्रयोग हो पाता है। हमारी राजनीति का अर्थ और स्वरुप ऐसा ही होना चाहिए।

लोकतन्त्रीय व्यवस्था और संविधान–

मूलतः लोकतन्त्रीय व्यवस्था के कार्यान्वयन की सैद्धान्तिक अवधारणा यह होती है कि व्यवस्था (राज्य) के सम्पूर्ण कार्यकलाप का संचालन संविधान के अनुसार होता है। लेकिन यह भी सच है कि संविधान तो अमूर्त सत्ता केन्द्र है, व्यवस्था के प्रकार की निर्जीव विवेचना है। इसका मूर्त रुप मनुष्य है और इसका सजीव दर्शन मनुष्यकृत क्रिया। इस परिस्थिति में तो लोकतन्त्र का प्रभाव व्यवस्था संचालन में कार्यरत मनुष्य की इच्छा के अनुकूल ही आएगा। उसकी इच्छा का जैसा भी गुण–धर्म होगा, व्यवस्था का वैसा ही परिणाम हमें प्राप्त होगा। तब क्या मनुष्य की सत्ता पिपासा की निरंकुशता इस सार्वजनिक व्यवस्था पद्धति को अपनी इच्छा से ही रौंदती रहेगी? नहीं! इस पद्धति के अन्वेषकों ने इसके सत्ता दोष के उन्मूलन का सरलतम प्रकार समाज को सुझाया है। वह प्रकार यह है कि यदि लोकतन्त्र किसी भी दशा में अपने मूल अर्थात समाज के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है तो उसे लोकतन्त्र नहीं कहा जा सकता है और जिस संविधान के प्रावधानों में अपने मूल के प्रति उत्तरदायित्व की प्रतिबद्धता नहीं होती है वह व्यवस्था का संवैधानिक प्रबन्ध नहीं होता है। उत्तरदायित्व की प्रतिबद्धता के अभाव में किसी भी संवैधानिक व्यवस्था के ढाँचे की वैसी ही स्थिति होती है जैसी कि किसी निरंकुश राजा या अधिनायक की अपने राज्य में होती है। राजनीतिशास्त्र की कसौटी पर भारत के संविधान की भाषा चाहे जितनी भी निपुण हो, लेकिन दुर्भाग्य से यह अपने नियामक के प्रति उत्तरदायी नहीं

है। इसके वैधानिक प्रबन्ध की विवेचना में लोकतन्त्र का अभाव है। मूलतः यह देश में अलोकतान्त्रिक लोकतन्त्र की स्थापना करता है। इस कारण से जनता दिग्भ्रमित होकर अपनी व्यवस्था के ढाँचे को बिना समझे राजनेताओं की नारेबाजी के भ्रम में पड़ी रहती है। भारत की जनता को अपने लोकतन्त्र को निरंकुश सत्ता केन्द्र की गुलामी से उबार कर पूर्णतः लोकतान्त्रिक बनाना होगा; तभी हम मानवता के ध्वजवाहक बन सकेगें। प्रस्तुत विषय में मैने इसी आधार पर अपनी व्यवस्था के गुण–धर्म की समीक्षा की है जिसके उचित या अनुचित होने का ऑकलन समाज करेगा।

अर्थव्यवस्था के विषय में–

प्रबन्ध के अभाव में जीवन का सुचारु होना असम्भव है। यदि प्रबन्ध में भी सामयिकता न हो तो वह जीवन को दिशाहीन कर देता है अर्थात प्रबन्ध उत्तरदायित्व में निहित और यथार्थप्रज्ञ होना ही चाहिए। जीवन में विकास की योजनाओं में भी प्रबन्ध अपनी इस कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। प्रस्तुत उपन्यास में मैने जीवन की अन्य विषय–वस्तुओं के साथ आर्थिक प्रबन्ध पर भी विचार किया है। प्रबन्ध के परिप्रेक्ष्य में देखें तो भारत के आर्थिक प्रबन्ध की स्थिति असफल है। ऐसा नहीं है कि स्वतन्त्रता के बाद भारत ने आर्थिक प्रगति नहीं की है, वास्तव में इस काल में भारत ने बहुत आर्थिक प्रगति की है। लेकिन हमारी आर्थिक प्रगति में सर्वथा समग्रता का अभाव रहा है। मूलतः समग्रता के अभाव में प्रबन्ध के मानक को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। प्रबन्ध के मानक से दूर हटकर निर्धारित की गयी भारत की अर्थव्यवस्था के असफल रहने के दो मुख्य कारण हमारे सामने प्रकट हैं, एक तो आर्थिक असमानता और दूसरा नियोजन की समग्रता का अभाव। इन दोनों कारणों से हमारी अर्थव्यवस्था का लाभ समाज के कुछ गिने–चुने लोग ही उठा पाते हैं या यूँ कहें कि स्वतन्त्रता के बाद के काल में हमारी अर्थव्यवस्था का भयंकर केन्द्रीयकरण हुआ है जोकि मूलतः हमारी आर्थिक नीतियों का परिणाम है। प्रस्तुत विषय में अर्थव्यवस्था के केन्द्रीयकरण के दुष्प्रभावों को ध्यान में रखते हुए कुछ वैकल्पिक सिद्धान्तों पर विचार किया गया है। जिनमें 'ऊर्जा कर' और 'सम्पत्ति कर' मुख्य हैं। यद्यपि देश में ऊर्जा व सम्पत्ति कर के विषय में विभिन्न विद्वान अपने–अपने मत स्पष्ट करते रहे हैं, किन्तु मेरे दृष्टिकोण में ऊर्जा व सम्पत्ति कर के माध्यम से अर्थव्यवस्था में निहित विशुद्ध श्रम (गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी और किसान) कर के प्रभाव से मुक्त हो जाएगें या जीवनयापन में उन पर अति आंशिक कर–भार आएगा तथा श्रम नियोजन के अवसर बहुतायत पर विकसित होगें। यह सब कैसे हो सकेगा, इस विषय की विस्तृत विवेचना विषय में निहित है।

भावी भारत का संविधान सहयोग राशि ₹50	वर्तमान संविधान की खामियों एवं उसके निराकरण का सुंदर विश्लेषण करती, देशभर के तमाम विद्वानों एवं बुद्धिजीवियों के साथ निरंतर 20 वर्षों तक शोध के उपरांत लिखी इस पुस्तक की लोकप्रियता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि अब तक तीन बार इसे अलग–अलग संस्थानों के द्वारा छपवाया जा चुका है।
मुनि मंथन निष्कर्ष सहयोग राशि ₹50	श्रद्धेय मुनि जी के 70 वर्षों तक देशभर के मूर्धन्य विद्वानों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ निरंतर 'विचार मंथन' के निष्कर्षों को सूत्र रूप में समेटे, इस पुस्तक को तैयार होने के बाद भी 4 वर्षों तक इसमें संकलित सिद्धांतों पर देशव्यापी विमर्श के उपरांत यह पुस्तक आपके सामने आ पाई है।
मौलिक व्यवस्था का विचार सहयोग राशि ₹50	यह पुस्तक 'व्यवस्था' पर तमाम वैश्विक संदर्भों के आधार पर गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती है। समाज के प्रत्येक इकाई के स्वतंत्रता सुरक्षा के साथ पोषण की गारंटी पर एक रिसर्च मॉडल के रूप में है यह पुस्तक है।
बस अब बहुत हो चुका सहयोग राशि ₹50	व्यवस्था की खामियों एवं उसके समाधान के लिए आवश्यक प्रभावी विचार एवं उद्दीपक ऊर्जा को अपने में समेटे इस पुस्तक को लिखा है अशोक गाडिया जी ने। यह पुस्तक 'व्यवस्था परिवर्तन' के वैचारिक पृष्ठभूमि को तैयार करती है।
मुनि मंथन सहयोग राशि ₹10	श्रद्धेय मुनि जी के विचारों को गागर में सागर सा अपने में समेटे सीधे सरल समझ में आने वाली शैली में लिखी यह पुस्तक, एक रंगकर्मी निर्देशक निर्माता एवं लेखक आनंद गुप्ता जी की रचना है। शराफत से समझदारी की ओर जाने वाले मार्ग का पथ प्रदर्शक के रूप में या पुस्तक पठनीय है।
रामानुजगंज एक आवाज सहयोग राशि ₹10	अपने में श्रद्धेय बजरंग मुनि जी के जीवन की झलक समेटे इस पुस्तक को श्री नरेंद्र जी ने नाटक की शैली में लिखा है। सामाजिक समस्याओं एवं उसके निराकरण पर पात्रों के माध्यम से यथार्थ को नए रंग रोगन में प्रस्तुत करती है यह पुस्तक।
एक ही रास्ता सहयोग राशि ₹10	नुक्कड़ नाटक गीत संगीत जैसे सांस्कृतिक विधाओं से लोगों को समझदार बनने की प्रेरणा देने के लिए मुनि जी ने अपनी युवावस्था से ही प्रयास शुरू कर दिए थे। उन तमाम गीतों एवं दृश्यों को नाटक के रूप में इस पुस्तक में लिपिबद्ध किया गया है।

इन पुस्तकों का एक सेट मंगाने के लिए मात्र ₹100 का आर्थिक सहयोग और अतिरिक्त डाक खर्च देना होगा। इन पुस्तकों को एक साथ मंगाने के लिए सम्पर्क करें–8318621282, 7869250001, 9617079344

हमारी संस्थाएँ

■ मार्गदर्शक समाजिक शोध संस्थान ■ ज्ञानयज्ञ परिवार

संस्थान के कार्य ■ समाज विज्ञान पर विश्वव्यापी रिसर्च तथा निष्कर्ष निकालना।

परिवार का कार्य

■ देश भर में ज्ञान केन्द्रो का इस तरह विस्तार हो कि वहाँ स्वतंत्र विचार मंथन हो तथा संवाद प्रणाली विकसित हो।

कार्यक्रम

■ ज्ञान चर्चा –प्रतिदिन शाम साढ़े आठ से साढ़े नौ बजे तक किसी एक पूर्व घोषित विषय पर स्वतंत्र वेबिनार।

■ महायज्ञ – वर्ष में एक बार या दो बार बड़े सामुहिक यज्ञ का आयोजन।

■ मार्गदर्शक मंडल – ऐसे न्यूनतम पाँच सौ लोगों की टीम तैयार करना जो समाज विज्ञान पर रिसर्च करने की क्षमता रखते हैं।

■ ज्ञान कुंभः– वर्ष मे दो बार पंद्रह–पंद्रह दिनो के ज्ञान कुंभ जिसमें मार्गदर्शक मंडल के लोग स्वतंत्र विचार द्वारा प्रतिदिन दो–दो विषयों पर निष्कर्ष निकाल कर समाज को दें।

माध्यम

- ज्ञान तत्व पाक्षिक पत्रिका
- यू टयूब चैनल
- फेसबुक एप से प्रसारण
- इंस्टाग्राम
- वॉट्सऐप ग्रुप से प्रसारण
- टेलीग्राम
- जूम एप पर वेबिनार
- कू एप

ज्ञानतत्व पाक्षिक पत्रिका का माह में दो प्रति का प्रकाशन सुचारू रूप से होना शुरू हो गया है। इसकी सहयोग राशि रू. 100/– वार्षिक अभी तय किया गया है। लेख प्रस्तुती आदि पर सुझाव अवश्य दें।

पंजीकृत पाक्षिक
पंजीकरण क्रमांक–68939 / 98

डाक पंजीयन क्रमांक–छ.ग. / रायगढ़ / 10 / 209–2021

प्रति,

श्री / श्रीमती _____

_____

_____

_____

संदेश

वर्तमान संसदीय लोकतंत्र में तो संसद एक जेल खाना है। जहां हमारा भगवान रूपी संविधान कैद है। भगवान को जेलखाने से मुक्त कराना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है। संसदीय लोकतंत्र को सहभागी लोकतंत्र में बदलना ही होगा। लोक संसद के लिये आंदोलन इसका प्रारंभिक चरण है। लोक स्वराज्य मंच ने इसकी पहल की है। लोक स्वराज्य मंच से जुड़िये और अपने भगवान को जेलखाने से मुक्त कराने की पहल कीजिए।

पत्र व्यवहार का पता

पता - बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बॉक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021
website : www.margdarshak.info

प्रकाशक, सम्पादक व स्वामी - बजरंगलाल
09617079344
Email : bajrang.muni@gmail.com
Support@margdarsgak.info
Facebook Id : **बजरंग मुनि** (User Name)

मुद्रक- माया प्रेस रामानुजगंज, सरगुजा (छ.ग.)